शिवकवच के माहात्म्य की कथा

एक समय दशार्णदेश के राजा वज्रबाहु की पत्नी सुमति अपने नजवात शिशु के साथ असाध्य रोग की शिकार हो गयी थी; इसलिये दुष्टबुद्धि राजा ने उसे वन में त्याग दिया। वहाँ अनेक प्रकार के कष्ट भोगती हुई वह यत्नपूर्वक आगे बढ़ने लगी। बहुत दूर जाने पर उसने वैश्यों का एक नगर देखा, जिसमें बहुत से स्त्री-पुरुष निवास करते थे। उस नगर का रक्षक एक बहुत बड़ा महाजन वैश्य था, जो पद्माकर के नाम से प्रसिद्ध था। वह दूसरे कुबेर के समान धनवान् था। उस वैश्यराज के घर में सेवाटहल का कार्य करनेवाली कोई दासी उधर ही आ रही थी। वह दूर से ही राजपत्नी को देखकर उसके समीप आयी। उसने रानी को देखते ही उसका सारा हाल जान लिया। वह पुत्रसहित अत्यन्त कष्ट भोग रही थी। दासी ने अपने स्वामी को उस स्त्री का दर्शन कराया। वैश्यराज ने रोगी पुत्र के साथ स्वयं भी रोग से पीड़ित हुई राजपत्नी को एकान्त में बुलाकर उसका सब वृत्तान्त पूछा और सब बात जान लेने पर अपने घर के पास ही एकान्त गृह में उसे ठहराया। अन्न, वस्त्र, जल और शय्या आदि का प्रबन्ध करके वैश्य ने माता के समान उसका आदर किया। उस घर में सुरक्षित होकर निवास करती हुई राजपत्नी के व्रण और यक्ष्मा आदि रोगों की शान्ति नहीं हुई।

कुछ ही दिनों में रानी का पुत्र घाव से पीड़ित होकर वैद्यों की चिकित्साशक्ति से परे जा पहुँचा और मृत्यु को प्राप्त हो गया। पुत्र के मरने पर रानी महान् शोक से ग्रस्त हो मूर्च्छित हो गयी और टूटी हुई लता के समान धरती पर गिर पड़ी। फिर सचेत होने पर वैश्य की स्त्रियों ने उसे बहुत समझाया तथापि वह अत्यन्त दुःखित हो विलाप करने लगी-'हा पुत्र! बन्धु-बान्धवों से त्यागी हुई अपनी इस दीन एवं अनाथ माता को छोड़कर तुम कहाँ चले गये।' जब वह इस प्रकार विलाप कर रही थी, उसी समय ऋषभ नाम से प्रसिद्ध शिवयोगी वहाँ आ पहुँचे। वैश्यराज ने अर्घ्य देकर उनका सत्कार किया। तत्पश्चात् वे शोकग्रस्त राजपत्नी के समीप जाकर इस प्रकार बोले-'बेटी! तुम इतनी क्यों रो रही हो? संसार में किसका जन्म हुआ और कौन मृत्यु को प्राप्त हुआ। ये शरीर आदि जल के फेन के समान क्षणभङ्गुर हैं। कभी इनकी प्रतीति का भ्रम होता है, कभी ये शान्त हो जाते हैं और कभी पुनः इनकी स्थिति होती है। अतः फेन के समान इस शरीर की मृत्यु होने पर विद्वान् पुरुष शोक नहीं करते। अबतक तुम्हारे सौ कोटि अयुत(दस हजार) जन्म व्यतीत हो चुके हैं। अब तुम्हीं बताओ, तुम किसकी-किसकी पुत्री हो, किसकी-किसकी माता हो और किसकी-किसकी पत्नी हो? यह शरीर पाँच भूतों का बना हुआ है। यह त्वचा, रक्त और मांस से बँधा हुआ है। मोह में पड़ी हुई नारी! यह जो तुम्हारे पास दूसरा शरीर(तुम्हारे पुत्र का शव) पड़ा हुआ है, इस अपने पुत्र को भी अपने शरीर से निकला हुआ मल समझकर तुम्हें शोक नहीं करना चाहिये। कोई भी पण्डित अपनी तपस्या, विद्या, बुद्धि, मन्त्र, ओषधि तथा रसायन से मृत्यु का उल्लङ्घन नहीं कर सकता।*

---

* **तपसा विद्यया बुद्ध्या मन्त्रौषधिरसायनैः।**
अतियाति परं मृत्युं न कश्चिदपि पण्डितः।। (स्कन्दपु. ब्रा. ब्रह्मो. 10/27)

सुमुखि! आज एक जीव की मृत्यु होती है, तो कल दूसरे की। अतः इस अनित्य शरीर के लिये तुम्हें शोक नहीं करना चाहिये। मृत्यु सदा समीप ही रहती है। फिर बताओ, देहधारियों को क्या सुख है? अतः यदि तुम जन्म, बुढ़ापा और मृत्यु को जीतना चाहती हो तो मृत्यु को जीतनेवाले सबके ईश्वर भगवान् उमापति की शरण में जाओ। तभीतक मृत्यु का घोर भय है तथा जन्म और जरावस्था का भय है, जबतक कि जीव भगवान् शिव के चरणारविन्दों की शरण में नहीं जाता। अत्यन्त भयंकर संसार में नाना प्रकार के दुःखों का अनुभव करके मनुष्य का मन जब उसकी ओर से विरक्त हो जाता है, उस समय उसे भगवान् महेश्वर का ध्यान करना चाहिये। जो मन से भगवान् शिव के ध्यानरूपी रसामृत का पान करता है, उस पुरुष को फिर संसार की विषयरूपी मदिरा को पीने की तृष्णा नहीं होती। जब सब प्रकार की आसक्तियों से छूटा हुआ मन वैराग्य के अधीन हो भगवान् शिव के चरणों के चिन्तन में मग्न हो जाता है, तब मनुष्य का इस संसार में फिर जन्म नहीं होता है। भद्रे! यह मन भगवान् शिव के ध्यान का एकमात्र साधन है, इसे शोक और मोह में न डुबाओ। शिवजी का भजन करो।'

इस प्रकार शिवयोगी ने अनुनयपूर्वक जब रानी को समझाया तब उसने उन्हीं को गुरु मानकर उनके चरणकमलों में प्रणाम करके कहा–भगवन्! जिसका एकमात्र पुत्र मर गया हो, जिसे प्रिय बन्धुओं ने त्याग दिया हो तथा जो महान् रोग से अत्यन्त पीड़ित रहती हो, ऐसी मुझ अभागिनी के लिये मृत्यु के सिवा दूसरी कौन गति है? इसलिये मैं इस शिशु के साथ ही प्राण त्याग देना चाहती हूँ। मृत्यु के समय जो आपका दर्शन हो गया, मैं इतने से ही कृतार्थ हूँ।

रानी की यह बात सुनकर दयानिधान शिवयोगी मरे हुए बालक के पास आये और शिवमन्त्र से अभिमन्त्रित भस्म लेकर उसके मुँह में डाल दिया। विभूति के पड़ते ही वह मरा हुआ बालक प्राणयुक्त हो गया। प्राण लौट आने पर बालक ने आँखें खोल दीं। उसकी इन्द्रियों में पूर्ववत् शक्ति आ गयी और वह दूध पीने की इच्छा से रोने लगा। तब नेत्रों से आनन्द के आँसू बहाती हुई रानी ने झपटकर बालक को गोद में उठा लिया और उसे छाती से चिपकाकर वह अपूर्व आनन्द में डूब गयी। तत्पश्चात् शिवयोगी ने माता और बालक के विषैले घावों से युक्त शरीर में भी भस्म का स्पर्श कराया। इससे उन दोनों के शरीर दिव्य हो गये। तत्पश्चात् शिवयोगी ऋषभ ने रानी से कहा–'बेटी! तुम दीर्घकालतक जीवित रहो। जबतक इस संसार में जीवित रहोगी, तबतक वृद्धावस्था तुम्हारा स्पर्श नहीं कर सकेगी। साध्वी! तुम्हारा यह पुत्र लोक में भद्रायु नाम से विख्यात होगा और अपना राज्य प्राप्त कर लेगा। तबतक तुम इन्हीं वैश्यराज के घर में निवास करो, जबतक कि तुम्हारा पुत्र पूर्ण विद्वान् न हो जाय।'

इस प्रकार ऋषभ योगी ने भस्म की शक्ति से मरे हुए राजकुमार को जीवित करके अपने अभीष्ट स्थान को प्रस्थान किया। भद्रायु उन्हीं वैश्यराज के घर में क्रमशः बढ़ने लगा। वैश्य के भी 'सुनय' नामक एक पुत्र था, जो राजकुमार का सखा हुआ। राजकुमार और वैश्यकुमार दोनों परस्पर

बड़ा स्नेह रखते थे। वैश्यराज ने विद्वान् ब्राह्मणों के द्वारा राजकुमार और अपने पुत्र का भी संस्कार विस्तारपूर्वक करवाया। समय पर उपनयन-संस्कार हो जाने के पश्चात् दोनों बालकों ने गुरुसेवा में तत्पर हो विनयपूर्वक सम्पूर्ण विद्याओं का संग्रह किया। तदनन्तर जब राजकुमार का सोलहवाँ वर्ष लगा, तब वे ही ऋषभ योगी पुनः वैश्यराज के घर आये। रानी और राजकुमार ने बड़े हर्ष के साथ उनको बार-बार प्रणाम करके उनकी यथायोग्य पूजा की। उन दोनों से पूजित होने पर योगीश्वर शिवयोगी ने कहा-'बेटा! तुम कुशल से तो हो न? तुम्हारी माता को भी कोई कष्ट तो नहीं है? क्या तुमने सब विद्याओं का अध्ययन कर लिया?'

योगीश्वर ऋषभ के ऐसा कहते समय विनयशीला रानी ने अपने पुत्र को उनके चरणों में डाल दिया और कहा-गुरुदेव! यह आपका ही पुत्र है। आप ही इसके प्राणदाता पिता हैं। आप दया करके अपने इस शिष्य को अनुगृहीत करें और इसे सत्पुरुषों के उत्तम मार्ग-शुभ कर्म का उपदेश दें। रानी के द्वारा इस प्रकार निवेदन किये जाने पर परम बुद्धिमान् शिवयोगी ने राजकुमार को सन्मार्ग का उपदेश दिया।

ब्राह्ममुहूर्त में उठकर भलीभाँति आचमन करके तुम पहले अपने गुरुजी को प्रणाम करो। तत्पश्चात् उमापति भगवान् शिव का ध्यान करो। गन्ध, पुष्प, ताम्बूल, शाक और पके फल आदि भक्ष्य-भोज्य प्रिय एवं नूतन पदार्थ पहले भगवान् शिव को अर्पण करके फिर प्रसादरूप से उसका उपभोग करो। जो कुछ दान, सत्कर्म, जप, स्नान, होम, चिन्तन तथा तप तुम्हारे द्वारा किया जाय, वह सब भगवान् शिव को समर्पित कर दो। खाते, पाठ करते, सोते, घूमते, देखते, सुनते, बोलते और ग्रहण करते समय सदा भगवान् शिव का ही चिन्तन करो। प्रतिदिन मन्त्रराज पञ्चाक्षर का जप और ध्यान करते हुए सदा भगवान् सदाशिव के चरणों में अपने मन को रमाते रहो। वत्स! यह संक्षेप से तुम्हारे लिये धर्म का उपदेश किया गया है।

ऋषभ शिवयोगी आगे कहते है-हे भद्रायु! पवित्र स्थान में यथायोग्य आसन बिछाकर बैठे। इन्द्रियों को अपने वश में करके प्राणायामपूर्वक अविनाशी भगवान् शिव का चिन्तन करे। परमानन्दमय भगवान् महेश्वर हृदय-कमल के भीतर की कर्णिका में विराजमान हैं। उन्होंने अपने तेज से आकाशमण्डल को व्याप्त कर रक्खा है। वे इन्द्रियातीत, सूक्ष्म, अनन्त एवं सबके आदि कारण हैं। इस प्रकार ध्यान के द्वारा समस्त कर्मबन्धन का नाश करके चिरकालतक चिदानन्दमय भगवान् सदाशिव में अपने चित्त को लगाये रहे। फिर षडक्षरन्यास के द्वारा अपने मन को एकाग्र करके मनुष्य शिवकवच के द्वारा अपनी रक्षा करे। इतना कहने के पश्चात् ऋषभजी ने शिवकवच का उपदेश किया।*

यह कवच सब बाधाओं को शान्त करनेवाला तथा समस्त प्राणियों के लिये गोपनीय वस्तु है। जो मनुष्य इस उत्तम शिव-कवच को सदा धारण करता है, उसे भगवान् शङ्कर की कृपा से कहीं

* शिवकवच का वर्णन पहले ही आ चुका है।

भी भय नहीं प्राप्त होता। जिसकी आयु क्षीण हो गयी है, जो मरणासन्न है अथवा महान् रोग से मृत-प्राय हो रहा है, वह भी इस कवच को धारण करने से तत्काल सुखी होता है और दीर्घ आयु पाता है। वत्स! मेरे दिये हुए इस उत्तम शिव-कवच को तुम श्रद्धापूर्वक धारण करो, इससे तुम शीघ्र ही कल्याण के भागी होओगे।

ऐसा कहकर ऋषभ योगी ने उस राजकुमार को बड़ी भारी आवाज करनेवाला एक शङ्ख तथा शत्रुओं का नाश करनेवाला एक खड्ग दिया। फिर भस्म को अभिमन्त्रित करके राजकुमार के सब अङ्गों में लगाया और उसे बारह हजार हाथियों का बल प्रदान किया। तदनन्तर योगी ने कहा-'इस तलवार की धार बड़ी पैनी है। तुम जिसको एक बार इसे दिखा दोगे, उस शत्रु की तत्काल मृत्यु हो जायगी; तथा तुम्हारे जो शत्रु इस शङ्खकी ध्वनि सुनेंगे, वे मूच्छित होकर गिर जायँगे, अचेत होकर हथियार डाल देंगे। ये खड्ग और शङ्ख दोनों ही दिव्य हैं। इनके प्रभाव से और भगवान् शिव के कवच की महिमा से, बारह हजार हाथियों के समान महान् बल से तथा भस्मधारणजनित शक्ति से तुम शत्रुसेना पर अवश्य विजय प्राप्त करोगे। पिता के सिंहासन को पाकर इस पृथ्वी की रक्षा करोगे।' इस प्रकार मातासहित भद्रायु को भलीभाँति उपदेश करके उन दोनों से पूजित हो योगीबाबा इच्छानुसार चले गये।

इधर मगध देश के राजा ने राजा वज्रबाहु को युद्ध में हराकर उनकी राजधानी को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया, उनकी स्त्रियों और गोधन आदि को हर लिया और वज्रबाहु को भी बलपूर्वक बाँधकर रथ पर बैठाकर वे शत्रु लोग अपने नगर को ले गये। इस प्रकार राष्ट्र के विनाश का भयङ्कर कोलाहल होने पर बलवान् राजकुमार भद्रायु ने भी यह समाचार सुना कि शत्रुओं ने मेरे पिता को बाँध लिया, मेरी माताओं को भी हर लिया और दशार्णदेश का राज्य नष्ट कर दिया है। यह सुनकर राजकुमार भद्रायु सिंह की भाँति गर्जना करने लगे। उसने शङ्ख और खड्ग ले लिये, कवच पहना और घोड़े पर सवार हो वह शत्रुओं को जीतने की इच्छा से बड़े वेग से उस स्थान पर आया, जहाँ मागधसेना भरी हुई थी। राजकुमार शीघ्र ही शत्रुओं की सेना में घुस गया और धनुष को कानतक खीचकर बाणों की वर्षा करने लगा। राजपुत्र के बाणों की मार खाकर शत्रु भी उस पर टूट पड़े और बड़े वेग से भयङ्कर बाणों द्वारा उसे घायल करने लगे। युद्धोन्मत्त शत्रुओं के अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा से आहत होकर भी धीर वीर राजकुमार रणभूमि में विचलित नहीं हुआ। वह शिवकवच से पूर्णतः सुरक्षित था। मागध-सैनिकों की अस्त्र-वर्षा का सामना करते हुए ही वीरवर भद्रायु ने शत्रुसेना में प्रवेश करके बहुत से रथों, हाथियों और पैदल सैनिकों को शीघ्रतापूर्वक मार गिराया। रणभूमि में ही एक रथी को सारथिसहित मारकर राजकुमार ने उस रथ पर अधिकार कर लिया और अपने मित्र वैश्यकुमार को सारथि बनाकर युद्ध में विचरण प्रारम्भ किया। ऐसा जान पड़ता था, मानो मृगों के झुंड में कोई सिंह भ्रमण कर रहा है। तब शत्रुसेना के सभी बलवान् सेनापति अपना धनुष उठाये क्रोध में भरकर केवल उसी की ओर दौड़

पड़े। यह देख राजकुमार भद्रायु उन आक्रमणकारियों के सामने अपना भयङ्कर खड्ग उठाये उन्हें अपना पराक्रम दिखलाने के लिये आगे बढ़ा। चमकती हुई विकराल तलवार को देखते ही सब सेनापति सहसा उसके प्रभाव से प्रतिहत हो प्राणों से हाथ धो बैठे। उस रणभूमि में जो-जो सैनिक उस चमचमाती हुई तलवार को देख लेते थे, उन सबकी तत्काल मृत्यु हो जाती थी। तदनन्तर भद्रायु ने शत्रुओं की सम्पूर्ण सेना का नाश करने के लिये अतिशय गर्जना करनेवाले उस महाशङ्ख को बजाया। उस शङ्ख-ध्वनि के सुनते ही सब शत्रु मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। अचेत होकर पृथ्वी पर पड़े हुए शस्त्रहीन सैनिकों को मृततुल्य मानकर धर्मशास्त्र के ज्ञाता राजकुमार ने उनका वध नहीं किया। अपने बँधे हुए पिता को बन्धनमुक्त करके शत्रुओं के वश में पड़ी हुई अपनी माताओं को भी राजकुमार ने छुड़ाया। इसी प्रकार मुख्य-मुख्य मन्त्रियों तथा अन्य पुरवासियों की स्त्रियों, बालकों और कन्याओं को गोधन आदि सहित शत्रुओं के भय से मुक्त करके उन सबको धैर्य बँधाया। तत्पश्चात् राजकुमार ने नगर के राजा, मन्त्री तथा मुख्य-मुख्य अधिकारियों और सेनापतियों को कैद करके बलपूर्वक अपनी पुरी में प्रवेश कराया। पहले युद्ध में जो लोग चारों दिशाओं में भाग गये थे, वे सब विश्वस्त होकर लौट आये और राजकुमार का पराक्रम देखकर सबके मन में बड़ा विस्मय हुआ। सब लोग सोचने लगे-'अहो! यह कोई योगसिद्ध अथवा तपःसिद्ध पुरुष है, या कोई देवता है। क्योंकि इसने जो महान् कर्म किया है, वह मनुष्य की शक्ति से परे है। इस अनन्त शक्तिधारी वीर ने नौ अक्षौहिणी सेना को परास्त किया है।

इसी समय भद्रायु के पिता राजा वज्रबाहु विस्मय और आह्लाद में डूबे तथा नेत्रों से आनन्द के आँसू बहाते हुए उसके सामने आये। राजकुमार ने प्रेम से विह्वल होकर पिता को प्रणाम किया। तब राजा ने पूछा-'महामते! तुम कौन हो? देवता हो या मनुष्य? अथवा कोई गन्धर्व तो नहीं हो? तुम्हारे माता-पिता कौन हैं, तुम्हारा देश कौन-सा है और तुम्हारा नाम क्या है? तुमने हमें और हमारी स्त्रियों को किस कारण से शत्रुओं के बन्धन से छुड़ाया है? तुम्हारे इस ऋण से बन्धु-बान्धवों समेत मैं हजार जन्मों में भी मुक्त नहीं हो सकता। इन पुत्रों, इन पत्नियों तथा इस राज्य और नगर को छोड़कर मेरा चित्त तुम्हीं में प्रेमपूर्वक बँधा हुआ है।'

भद्रायु बोला-राजन्! यह मेरा सखा वैश्यपुत्र है। इसका नाम सुनय है। मैं इसी के सुन्दर गृह में अपनी माता के साथ निवास करता हूँ। मेरा नाम भद्रायु है। मैं अपना वृत्तान्त पीछे आपको बताऊँगा। इस समय आप स्त्रियों और मित्रजनों के साथ नगर में प्रवेश कीजिये और शत्रुओं का भय छोड़कर सुख से रहिये। जबतक मैं पुनः लौटकर न आऊँ, तबतक इन शत्रुओं को न छोड़ियेगा।

ऐसा कहकर राजकुमार भद्रायु राजा की आज्ञा ले अपने घर को आया और वहाँ उसने अपनी माता से सब समाचार कह सुनाया। रानी ने प्रसन्न होकर अपने पुत्र को हृदय से लगा लिया और

वैश्यराज ने भी प्रेम से राजकुमार का आलिङ्गन करके उसका विशेष सत्कार किया। इधर महाराज वज्रबाहु स्त्री, पुत्र और मन्त्रियों के साथ अपने राजमहल में प्रवेश करके बहुत प्रसन्न हुए। वह रात्रि व्यतीत होने पर योगियों में श्रेष्ठ ऋषभ महारानी सीमन्तिनी* के पति राजा चन्द्राङ्गद के समीप गये और भद्रायु की उत्पति तथा उसके अलौकिक पराक्रम का वर्णन करके एकान्त में प्रेमपूर्वक बोले–'राजन्! तुम अपनी पुत्री कीर्तिमालिनी का विवाह राजकुमार भद्रायु के साथ करो। इस प्रकार निषधराज को समझाकर योगी ऋषभ चले गये।'

तदनन्तर राजा चन्द्राङ्गद ने वैवाहिक मङ्गल के लिये उपयुक्त शुभ मुहूर्त में भद्रायु को बुलाया और अपनी कीर्तिमालिनी नामक पुत्री उसे ब्याह दी। भद्रायु के पिता राजा वज्रबाहु को भी बुलाकर निषधराज ने मन्त्रियोंसहित उनकी अगवानी की और नगर में आने पर उनका यथावत् सत्कार किया। वज्रबाहु ने देखा शत्रुओं का नाश करनेवाला भद्रायु विवाह करके मेरे चरणों में प्रणाम कर रहा है। तब उन्होंने बड़े प्रेम और हर्ष से उठाकर उसे हृदय से लगा लिया तथा निषधराज से कहा–'चन्द्राङ्गदजी! आपका यह दामाद बड़ा बलवान् है। मैं इसके वंश और जन्म का यथार्थ परिचय सुनना चाहता हूँ।' उनके इस प्रकार पूछने पर निषधराज ने उनसे एकान्त में मिलकर हँसते हुए कहा–'महाराज! यह आपका ही पुत्र है। शैशवकाल में यह रोग से पीड़ित था और इसकी माता भी रोग से व्याकुल रहती थी। अतः आपने मातासहित इस बालक को वन में त्याग दिया था। बालक के साथ वन में घूमती हुई वह असहाय नारी दैवयोग से एक वैश्य के घर में जा पहुँची। वैश्य ने उसकी रक्षा की। फिर आपका यह बालक रोग से अत्यन्त पीड़ित होकर मर गया। किंतु किसी योगिराज ने आकर इसे पुनः जीवित कर दिया। योगिराज का नाम ऋषभ है। शिवयोगी ऋषभ के ही प्रभाव से ये माँ–बेटे देवताओं के समान दिव्य रूप को प्राप्त हुए हैं। उन्हीं के दिये हुए शत्रुनाशक खड्ग और शङ्ख के द्वारा शिव–कवच से सुरक्षित हो भद्रायु ने युद्ध में शत्रुओं पर विजय पायी है। ये अकेले ही बारह हजार हाथियों का बल धारण करते हैं। ये सब विद्याओं में पारङ्गत हैं और अब मेरे जामाता भी हो गये हैं। अतः आप इन्हें और इनकी पतिव्रता माता को साथ लेकर अपने नगर को जाइये। इससे आप उत्तम कल्याण के भागी होंगे।'

ये सब बातें बताकर राजा चन्द्राङ्गद अपने रनिवास में ठहरी हुई राजा की ज्येष्ठ पत्नी को वहाँ ले आये। वे वस्त्र–आभूषणों से विभूषित थीं। उन्होंने वज्रबाहु को रानी से मिलाया। यब सब वृत्तान्त सुनकर और देखकर राजा वज्रबाहु बहुत लज्जित हुए और मूर्खतावश उनके द्वारा जो अनुचित कर्म हो गया था, उसकी वे स्वयं ही निन्दा करने लगे। पत्नी और पुत्र के दर्शन से उन्हें बड़ी प्रसन्नता प्राप्त हुई। उनके सब अङ्गों में रोमाञ्च हो आया और उन्होंने दोनों को हृदय से लगा लिया। इस

* सीमन्तिनी एवं चन्द्रांगद की कथा का उल्लेख 'सोमवारव्रत' के माहात्म्य के सन्दर्भ में किया जायेगा। पाठक उस स्थल को देख सकते हैं।

प्रकार निषध-राज से पूजित और प्रशंसित होकर राजा वज्रबाहु ने अपनी बड़ी रानी को, राजकुमार भद्रायु को और पुत्रवधू कीर्तिमालिनी को भी साथ ले परिवारसहित अपनी राजधानी को प्रस्थान किया। वहाँ जाकर भद्रायु ने समस्त पुरवासियों को आनन्दित किया। समय आने पर उसके पिता जब स्वर्गवासी हो गये, तब युवावस्था में अद्‌भुत पराक्रमी भद्रायु ने सम्पूर्ण पृथ्वी का शासन किया और ब्रह्मर्षियों के समीप मगधराज हेमरथ से मित्रता जोड़कर उन्हें अपने बन्धन से मुक्त किया।

राजसिंहासन प्राप्त कर लेने पर वीर राजा भद्रायु ने किसी समय अपनी धर्मपत्नी के साथ रमणीय वन में प्रवेश किया। वहाँ उन्होंने देखा, कुछ ही दूर पर एक ब्राह्मण पति-पत्नी चिल्लाते हुए भागे जा रहे हैं और कोई बाघ उनका पीछा कर रहा है। वे दोनों पति-पत्नी कह रहे थे-'महाराज! हा राजन्! हे करुणानिधे! हमारी रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये।' यह पुकार सुनकर राजा ने अपना धनुष उठाया। इतने में ही वह व्याघ्र आ पहुँचा। उसने ब्राह्मणी-को पकड़ लिय। वह 'हा नाथ! हा नाथ! हा प्राणवल्लभ! हा शम्भो! हा जगदीश्वर!' आदि कहकर विलाप करने लगी। व्याघ्र बड़ा भयानक था। उसने ज्योंही ब्राह्मणी को पकड़ा, त्योंही राजा भद्रायु ने अपने तीखे बाणों से उसके मर्म में आघात किया। किंतु वह महाबली व्याघ्र उन बाणों से तनिक भी व्यथित न हो, ब्राह्मणी को बलपूर्वक खींचकर दूर निकल गया। अपनी पत्नी को व्याघ्र के पञ्जे में पड़ी हुई देख ब्राह्मण को बड़ा दुःख हुआ। वह विलाप करने लगा-'हा प्रिये! हा कान्ते! हा पतिव्रते! मुझे यहाँ अकेला छोड़कर तुम परलोक में कैसे चली गयी? तुमको छोड़कर मैं कैसे जीवित रह सकता हूँ। राजन्! तुम्हारे वे बड़े-बड़े अस्त्र-शस्त्र कहाँ हैं, जिनकी बड़ी प्रशंसा सुनी जाती थी? वह महान् धनुष अब क्या हो गया? तुम्हारा बारह हजार हाथियों से भी अधिक बल कहाँ है? तुम्हारे शङ्ख, खड्ग तथा मन्त्रास्त्रविद्या से क्या लाभ हुआ? दूसरों को क्षीण होने से बचाना क्षत्रियों का परम धर्म है। धर्मज्ञ राजा अपना धन और प्राण देकर भी शरण में आये हुए दीन-दुखियों की रक्षा करते हैं। जो पीड़ितों की प्राणरक्षा नहीं कर सकते, ऐसे लोगों के जीवन की अपेक्षा तो उनकी मृत्यु ही श्रेष्ठ है।'

इस प्रकार ब्राह्मण का विलाप और उसके मुख से अपने पराक्रम की निन्दा सुनकर राजा ने शोक से मन-ही-मन इस प्रकार विचार किया-'अहो! आज भाग्य के उलट-फेर से मेरा पराक्रम नष्ट हो गया। मेरे धर्म का नाश हो गया। अतः अब मेरी सम्पदा, राज्य और आयु का निश्चय ही नाश हो जायगा।' यों विचारकर राजा भद्रायु ब्राह्मण के चरणों में गिर पड़े और उसे धीरज बँधाते हुए बोले-'ब्रह्मन्! मेरा पराक्रम नष्ट हो गया है। मुझ क्षत्रियाधम पर आप कृपा कीजिये। महामते! शोक छोड़ दीजिये। मैं आपको मनोवाञ्छित पदार्थ दूँगा। यह राज्य, यह रानी और मेरा यह शरीर सब कुछ आपके अधीन है। बोलिये आप क्या चाहते हैं?'

ब्राह्मण बोले–राजन्! अन्धे को दर्पण से क्या काम? जो भिक्षा माँगकर जीवन–निर्वाह करता हो, वह बहुत से घर लेकर क्या करेगा। जो मूर्ख है, उसे पुस्तक से क्या काम तथा जिसके पास स्त्री नहीं है, वह धन लेकर क्या करेगा? मेरी पत्नी चली गयी। अतः आप अपनी इस बड़ी रानी को मुझे दे दीजिये।

राजा ने कहा–ब्रह्मन्! क्या यही तुम्हारा धर्म है? क्या तुम्हें गुरु ने यही उपदेश किया है? क्या तुम नहीं जानते कि परायी स्त्री का स्पर्श स्वर्ग एवं सुयश की हानि करनेवाला है? परस्त्री के उपभोग से जो पाप कमाया जाता है, उसे सैकड़ों प्रायश्चित्तों द्वारा भी धोया नहीं जा सकता।

ब्राह्मण बोले–राजन्! मैं अपनी तपस्या से भयङ्कर ब्रह्महत्या और मदिरापान जैसे पाप का भी नाश कर डालूँगा। फिर परस्त्रीसङ्गम किस गिनती में है। अतः आप अपनी इस भार्या को मुझे अवश्य दे दीजिये। अन्यथा आप निश्चय ही नरक में पड़ेंगे।

ब्राह्मण की इस बात पर राजा ने मन–ही–मन विचार किया कि ब्राह्मण के प्राण की रक्षा न करने से महापाप होगा। अतः इससे बचने के लिये पत्नी को दे डालना ही श्रेष्ठ है। इस श्रेष्ठ ब्राह्मण को अपनी पत्नी देकर मैं पाप से मुक्त हो शीघ्र ही अग्नि में प्रवेश कर जाऊँगा। मन–ही–मन ऐसा निश्चय करके राजा ने आग जलायी और ब्राह्मण को बुलाकर उसके प्रति अपनी पत्नी को दे दिया। तत्पश्चात् स्नान करके पवित्र हो देवताओं को प्रणाम करके उन्होंने अग्नि की दो बार परिक्रमा की और एकाग्रचित्त होकर भगवान् शिव का ध्यान किया। इस प्रकार राजा को अग्नि में गिरने के लिये उद्यत देख जगत्पति भगवान् विश्वनाथ सहसा वहाँ प्रकट हो गये। उनके पाँच मुँह थे। मस्तक पर चन्द्रकला आभूषण का काम दे रही थी। कुछ–कुछ पीले रंग की जटा लटकी हुई थी। वे कोटि–कोटि सूर्यों के समान तेजस्वी थे। हाथों में त्रिशूल, खट्वाङ्ग, कुठार, ढाल, मृग, अभय, वरद और पिनाक धारण किये, बैल की पीठ पर बैठे हुए भगवान् नीलकण्ठ को राजा ने अपने आगे प्रत्यक्ष देखा। उनके दर्शनजनित आनन्द से युक्त हो राजा भद्रायु ने हाथ जोड़कर स्तवन किया।

राजा बोले–जिनका दूसरा कोई स्वामी नहीं है, जो अविकारी, प्रधान गुणों से युक्त और महान् हैं तथा स्वयं कारणरहित होकर कारणों के भी कारण हैं, उन सच्चिदानन्दमय प्रशान्तस्वरूप देव परमशिव को मैं नमस्कार करता हूँ। आप सम्पूर्ण विश्व के साक्षी, इस जगत् के कर्ता, महान् तेजोमय तथा सबके हृदय में अन्तर्यामी रूप से स्थित हैं। इसीलिये विद्वान् पुरुष सदा आपकी खोज करते हैं और योगीजन अपनी चित्तवृत्तियों को रोककर अनेक प्रकार के योगसाधनों द्वारा आपकी आराधना करते हैं। जो लोग एकात्मता की भावना करते हैं, उनके लिये आप एक हैं और जिनकी बुद्धि में नानात्व की प्रतीति होती है, उनके लिये आप ही अनेक रूपों में व्यक्त हुए हैं। आपका पद (स्वरूप) इन्द्रियों

से परे, सबका साक्षी, आविर्भाव और तिरोभाव की लीला से युक्त तथा मन की पहुँच से दूर है। आप मन और वाणी के लिये दुर्लभ हैं। आप में मोह का सर्वथा अभाव है। आप परमात्मरूप हैं। मेरी वाणी केवल सत्त्वादि गुणों में स्थित और प्रकृति में विलीन होनेवाली है। अतः वह आपके दिव्य विग्रह की स्तुति करने में कैसे समर्थ हो सकती है? तथापि शरणागतों का दुःख दूर करनेवाले आपके चरण-कमलों का जो लोग भक्तिपूर्वक आश्रय लेते हैं, वे आपको प्राप्त होते हैं। अतः भयङ्कर भवरूपी दावानल में पीड़ित हो मैं संसारभय की शान्ति के लिये नित्य आपका भजन करता हूँ। देवताओं के भी देवता, कल्याणनिकेतन, भगवान् महादेव को नमस्कार है। सृष्टि, पालन और संहार करनेवाले त्रिमूर्तिरूप आपको नमस्कार है। विश्व के आदिरूप और संहार के प्रथम साक्षी आपको नमस्कार है। सत्तामात्र तत्त्व आपका स्वरूप है, आपको नमस्कार है। आप ज्ञानानन्दघन हैं, आपको नमस्कार है। आप सम्पूर्ण क्षेत्रों में निवास करनेवाले हैं। आपकी आत्मशक्ति सब क्षेत्रों से भिन्न है। आप ही अशक्त हैं और आप ही अतिशय शक्तिमान् के रूप में आभासित होते हैं। आप भूमा परमेश्वर को नमस्कार है। आप नित्य, निराभास, सत्यज्ञानमय विशुद्ध अन्तरात्मा हैं, सबसे दूर और समस्त कर्मों से मुक्त हैं। आपको प्रणाम है। आप वेदान्तद्वारा जाननेयोग्य तथा वेद के मूल भाग में निवास करनेवाले हैं, आपको प्रणाम है। आपकी चेष्टाएँ (लीलाएँ) विवेकयुक्त एंव पवित्र होती हैं। आप त्रिगुणमयी वृत्तियों से सर्वथा दूर हैं, आपको नमस्कार है। आपका पराक्रम कल्याणमय है, आप कल्याणमय फल देनेवाले हैं, आपको नमस्कार है। आप अनन्त, महान्, शान्त एंव शिवरूप हैं, आपको नमस्कार है। आप अघोर (सौम्य), अत्यन्त घोर और घोर पापराशि का विदारण करनेवाले हैं। संसारबन्धन के बीजों को भून डालनेवाले सर्वश्रेष्ठ गुरु भगवान् भर्ग को नमस्कार है। मोहरहित एवं निर्मल आत्मगुणोंवाले आपको नमस्कार है। जगदीश्वर! सनातन देव शङ्कर! विरूपाक्ष रुद्र! अविनाशी मृत्युञ्जय! मेरी रक्षा कीजिये। हे कल्याणमय चन्द्रशेखर! शान्तमूर्ति गौरीपते! सूर्य, चन्द्र एवं अग्निमय नेत्रोंवाले गङ्गाधर! अन्धकासुर का नाश करनेवाले पुण्यकीर्ति भूतनाथ! और कैलास पर्वत पर निवास करनेवाले महादेव! आपको बारंबार नमस्कार है।

राजा के इस प्रकार स्तुति करने पर माता पार्वती के साथ प्रसन्न हुए करुणानिधान महेश्वर ने कहा-राजन्! तुमने किसी अन्य का चिन्तन न करके जो सदा-सर्वदा मेरा पूजन किया है, तुम्हारी इस भक्ति के कारण और तुम्हारे द्वारा की हुई इस पवित्र स्तुति को सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। तुम्हारे भक्तिभाव की परीक्षा के लिये मैं स्वयं ब्राह्मण बनकर आया था। जिसे व्याघ्र ने ग्रस लिया था, वह ब्राह्मणी और कोई नहीं, ये गिरिराजनन्दिनी उमादेवी ही थीं। तुम्हारे बाण मारने से भी जिसके शरीर को चोट नहीं पहुँची, वह व्याघ्र मायानिर्मित था। तुम्हारे धैर्य को देखने के लिये ही मैंने तुम्हारी पत्नी

को माँगा था। इस कीर्तिमालिनी की और तुम्हारी भक्ति से मैं सन्तुष्ट हूँ। तुम कोई दुर्लभ वर माँगों, मैं उसे दूँगा।

राजा बोले–देव! आप साक्षात् परमेश्वर हैं। आपने सांसारिक ताप से घिरे हुए मुझ अधम को जो प्रत्यक्ष दर्शन दिया है, यही मेरे लिये महान् वर है। देव! आप वरदाताओं में श्रेष्ठ हैं। आप से मैं दूसरा कोई वर नहीं माँगता। मेरी यही इच्छा है कि मैं, मेरी रानी, मेरे माता–पिता, पद्माकर वैश्य और उसके पुत्र सुनय–इन सबको आप अपना पार्श्ववर्ती सेवक बना लीजिये।

तत्पश्चात् रानी कीर्तिमालिनी ने प्रणाम करके अपनी भक्ति से भगवान् शङ्कर को प्रसन्न किया और यह उत्तम वर माँगा–'महादेव! मेरे पिता चन्द्राङ्गद और माता सीमन्तिनी–इन दोनों को भी आपके समीप निवास प्राप्त हो।' भक्तवत्सल भगवान् गौरीपति ने प्रसन्न होकर 'एवमस्तु' कहा और उन दोनों पति–पत्नी को इच्छानुसार वर देकर वे क्षणभर में अन्तर्धान हो गये। इधर राजा ने भगवान् शङ्कर का प्रसाद प्राप्त करके रानी कीर्तिमालिनी के साथ प्रिय विषयों का उपभोग किया और दस हजार वर्षोंतक राज्य करने के पश्चात् अपने पुत्रों को राज्य देकर उन्होंने शिवजी के परम पद को प्राप्त किया। राजा और रानी दोनों ही भक्तिपूर्वक महादेवजी की पूजा करके भगवान् शिव के धाम को प्राप्त हुए। यह परम पवित्र, पापनाशक एवं अत्यन्त गोपनीय भगवान् शिव का विचित्र गुणानुवाद जो विद्वानों को सुनाता है अथवा स्वयं भी शुद्धचित्त होकर पढ़ता है, वह इस लोक में भोग–ऐश्वर्य को प्राप्त कर अन्त में भगवान् शिव को प्राप्त होता है।

(उपर्युक्त कथा गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा सं. 2050 में प्रकाशित 'कल्याण' के संक्षिप्त स्कंदपुराणांक के ब्राह्मखण्ड–ब्राह्मोत्तरखण्ड के पृ. 524–533 पर आधारित है।)

❀❀❀❀❀❀

नास्ति भर्गसमो देवो नास्ति गङ्गासमा नदी।
नास्ति हिंसासमं पापं नास्ति धर्मो दयापरः।।

(संक्षिप्त स्कन्दपुराणांक, गीताप्रेस, नागरखण्ड 29/221 पृ. 845 से उद्धृत)

भगवान् शंकर के समान कोई देवता नहीं है, गंगा के समान दूसरी नदी नहीं है, हिंसा के समान पाप नहीं है और दया से बढ़कर कोई धर्म नहीं है।